[2019] 4 उम. नि. प. 174

एस. सुब्रमण्यन्

बनाम

एस. रामास्वामी

[2019 की सिविल अपील सं. 4536-4537]

1 मई, 2019

न्यायमूर्ति एल. नागेश्वर राव और न्यायमूर्ति एम. आर. शाह

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 – द्वितीय अपील – उच्च न्यायालय की शक्ति – उच्च न्यायालय द्वारा अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करके निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्ष को अपास्त करना – चूंकि द्वितीय अपील केवल विधि के सारवान् प्रश्न पर ही न कि तथ्य या विधि संबंधी किसी प्रश्न पर अनुज्ञेय होती है, इसलिए, विधि संबंधी प्रत्येक प्रश्न विधि का सारवान् प्रश्न नहीं हो सकता है तथा उच्च न्यायालय का निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए तथ्य संबंधी निष्कर्षों को अपास्त करना तब तक न्यायोचित नहीं हो सकता है जब तक कि वे निष्कर्ष प्रत्यक्षतः अनुचित और/या अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के प्रतिकूल नहीं होते हैं ।

हिन्दू विधि – अविभक्त कौटुम्बिक संपत्ति – विभाजन के लिए वाद – स्वार्जित संपत्ति को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्ति में मिलाना – यदि संपत्ति के बारे में यह साबित हो जाता है कि वह अविभक्त हिन्दू कुटुम्ब के एक सदस्य की स्वार्जित संपत्ति है क्योंकि वह संपत्ति उसके द्वारा अपने सीधे पुरुष पूर्वजों से नहीं बल्कि अपनी माता की बहिन के पति से अभिप्राप्त की गई थी तो मात्र इस कारण कि अविभक्त हिन्दू कुटुम्ब का वह सदस्य अपने पुत्रों के साथ उस संपत्ति में रह रहा था और उस संपत्ति के संबंध में उन्होंने मिलकर कुछ उधार लिया था, यह नहीं कहा जा सकता है कि वादगत संपत्ति को पैतृक संपत्ति में मिला दिया गया था ।

प्रस्तुत मामले में, मूल वादी (इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1) ने वादपत्र की अनुसूची में वर्णित स्थावर संपत्तियों की बाबत प्रतिवादी सं. 2 (इस मामले में अपीलार्थी) को वादगत संपत्तियों में वादी के एक-तिहाई सामान्य अंश की बाबत वादी और मूल प्रतिवादी सं. 2 के बीच स्थायी व्यादेश की डिक्री द्वारा माप और सीमांकन करके अंतिम विभाजन होने तक अन्यसंक्रामण या विल्लंगम करने या किसी किस्म की दस्तावेज़ का सृजन करने से अवरुद्ध करने के लिए आरंभ में 2006 का मूल वाद सं. 10 फाइल किया था । उक्त वाद मूल वादी द्वारा अपने पिता सेनगोडा गौंडर (मृत) तथा अपने छोटे भाई सुब्रमण्यन् के विरुद्ध फाइल किया गया था । उक्त वाद के लंबित रहने के दौरान इसी वादी ने अपने छोटे भाई और अपने पिता के विरुद्ध वादगत संपत्तियों के विभाजन के लिए 2005 का मूल वाद सं. 19 फाइल किया । मूल वादी का यह पक्षकथन था कि वादी और उसका पिता तथा उसका छोटा भाई एक हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब गठित करते थे जिसके स्वामित्व में पैतृक संपत्तियां थीं । वादी की ओर से इसके अलावा यह पक्षकथन किया गया कि वादी के पिता ने तारीख 7 अप्रैल, 1956 का प्रदर्श ए1-व्यवस्थापन विलेख कुमारस्वामी गौंडर नामक व्यक्ति द्वारा सेनगोडा गौंडर के पक्ष में निष्पादित कराया । वादी की ओर से यह कथन किया गया था कि उस समय से पैतृक संपत्तियों सहित वादगत संपत्तियों को भी अविभक्त कुटुम्ब की संपत्तियां माना गया था और सभी तीनों सहदायिक उनका मिलकर उपभोग कर रहे थे । यह अभिकथन किया गया था कि चूंकि वादी का पिता और उसका छोटा भाई, एक-दूसरे से दुरभिसंधि करके वादगत संपत्ति का अन्यसंक्रामण करने का प्रयत्न कर रहे थे इसलिए प्रथम व्यादेश वाद (2005 का मूल वाद सं. 19) फाइल किया गया था । इस वाद का मूल प्रतिवादी-वादी के छोटे भाई द्वारा विरोध किया गया था । मूल प्रतिवादी की ओर से यह पक्षकथन किया गया था कि सेनगोडा गौंडर और उसके दो पुत्रों, अर्थात्, रामास्वामी और सुब्रमण्यन् के बीच कभी भी कोई अविभक्त कुटुम्ब विद्यमान नहीं था । यह कि वादगत संपत्तियां सेनगोडा गौंडर द्वारा वर्ष 1956 के दौरान प्रदर्श ए1-व्यवस्थापन विलेख के अनुसार उसकी स्वार्जित संपत्तियों के रूप में अभिप्राप्त की गई थीं । यह कि सेनगोडा गौंडर के पुत्रों, अर्थात्

रामास्वामी और सुब्रमण्यन् का वादगत संपत्तियों से कोई संबंध नहीं था और उनका उसमें कोई सांपत्तिक अधिकार या अंश नहीं था और यह कि उन्हें कभी भी अविभक्त कुटुम्ब संपत्तियां नहीं माना गया था । प्रतिवादी की ओर से विनिर्दिष्ट पक्षकथन यह किया गया था कि वास्तव में सेनगोडा गौंडर ने अपने जीवनकाल के दौरान सुब्रमण्यन् के पक्ष में दो व्यवस्थापन विलेख, प्रदर्श ए13 और ए14 निष्पादित किए थे और इसके पश्चात् उसने सुब्रमण्यन् के पक्ष में तारीख 8 नवम्बर, 2004 की वसीयत, प्रदर्श बी24 भी निष्पादित की । प्रतिवादी की ओर से यह पक्षकथन किया गया था कि इस प्रकार सुब्रमण्यन्-प्रतिवादी वादगत संपत्तियों का आत्यंतिक स्वामी बना । प्रतिवादी की ओर से यह भी दलील दी गई थी कि द्वितीय वाद सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 द्वारा वर्जित भी है । प्रतिवादी की ओर से यह कथन किया गया था कि वादी ने व्यादेश वाद (प्रथम वाद) फाइल किए जाने से पूर्व विभाजन की ईप्सा करते हुए सूचना जारी की और इसके बावजूद उसने आरंभ में केवल व्यादेश वाद फाइल किया और इसके पश्चात्, बिना किसी तुक या कारण के और व्यादेश वाद फाइल करते समय न्यायालय से बाद में विभाजन वाद फाइल करने की अनुज्ञा अभिप्राप्त किए बिना उसने केवल द्वितीय वाद फाइल कर दिया, जो कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 द्वारा वर्जित था । विचारण न्यायालय ने विवाद्यक विरचित किए । दोनों वादों का संयुक्त रूप से विचारण किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् दोनों वाद खारिज कर दिए । असफल वादी द्वारा फाइल की गई अपीलें विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गईं । प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित उस सामान्य निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, जिसके द्वारा अपीलें खारिज कर दी गई थीं और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा वादों को खारिज करते हुए पारित निर्णय और डिक्री को पुष्ट कर दिया गया था, मूल वादी ने उच्च न्यायालय के समक्ष दो द्वितीय अपीलें फाइल कीं । उच्च न्यायालय ने विधि के कतिपय प्रश्न, विधि के सारवान् प्रश्नों के रूप में बनाए और विरचित किए । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा और अभिलेख पर विद्यमान संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन

करने के पश्चात् विधि के उपर्युक्त प्रश्नों/विधि के सारवान् प्रश्नों का उत्तर देते हुए दोनों अपीलें मंजूर कर लीं और विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपील न्यायालय के सामान्य निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया और विभाजन की प्रारंभिक डिक्री तैयार करने का निदेश दिया है, जिसमें वादी और प्रतिवादी, प्रत्येक को आधा अंश आबंटित किया जाए । मूल प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय अभिलेख पर विद्यमान संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया है और दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को अपास्त कर दिया था, प्रस्तुत अपीलें फाइल की हैं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – उच्च न्यायालय ने गुणागुण के आधार पर यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की है कि सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाया गया था । यह एक स्वीकृत स्थिति है कि, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है और अभिनिर्धारित किया गया है कि वादगत संपत्तियां तारीख 7 अप्रैल, 1956 के व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए1 के अनुसरण में सेनगोडा गौंडर की स्वार्जित संपत्तियां थीं क्योंकि सेनगोडा गौंडर द्वारा वे संपत्तियां अपने सीधे पुरुष पूर्वजों से अभिप्राप्त नहीं की गई थीं बल्कि अपनी माता की बहिन के पति से अभिप्राप्त की गई थीं । उच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि जब कुछ संपत्तियों का विक्रय किया गया था तब तारीख 7 अप्रैल, 1956 के व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए1 में विनिर्दिष्ट इनमें से कुछ संपत्तियों का विक्रय किया गया था और विवरण में यह उल्लेख किया गया था कि इन संपत्तियों का विक्रय कुटुम्ब के खर्चों और फार्म के व्ययों की अत्यावश्यक आवश्यकता को पूरा करने के लिए किया गया था और यह उल्लेख किया गया था कि वे संपत्तियां उनके पूर्वजों के माध्यम से संयुक्त रूप से उनकी थीं । तथापि, दस्तावेज़ी साक्ष्य और विशेष रूप से व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए13, ए14 और स्वयं सेनगोडा गौंडर द्वारा निष्पादित

वसीयत-प्रदर्श बी24, जिसके द्वारा वही संपत्तियां मूल प्रतिवादी-उसके पुत्र सुब्रमण्यन् को दी गई थीं, पर विचार करने पर पिता-सेनगोडा गौंडर का आशय अत्यंत स्पष्ट था कि वादगत संपत्तियों को स्वार्जित संपत्तियां न कि अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियां माना गया था । उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए इन कारणों को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि चूंकि वादगत संपत्तियों के संबंध में बोरवैल के उधार, फसल उधार, इलैक्ट्रिक मोटर पम्प सैट उधार, आभूषण उधार अविभक्त कुटुम्ब के सभी तीन सदस्यों, अर्थात् सेनगोडा गौंडर, रामास्वामी और सुब्रमण्यन् द्वारा लिए गए थे इसलिए वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाया भी गया था । चूंकि ये सभी तीनों एक साथ निवास कर रहे थे और हो सकता है कि कुछ उधार एक साथ रहने वाले कौटुम्बिक सदस्यों द्वारा लिए गए हों, किन्तु इसके आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाया गया था । संपत्तियों को मिलाने के पहलू के संबंध में विधि सुस्थापित है कि किसी अविभक्त हिन्दू कुटुम्ब की पृथक् और स्वार्जित संपत्ति को तब अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों का स्वरूप प्रदान किया जा सकता है यदि वह संपत्ति उसके स्वामी द्वारा उस संपत्ति में अपने पृथक् दावे का परित्याग करने के आशय से स्वेच्छया सामान्य संपत्ति में मिला ली गई हो; किन्तु ऐसा परित्याग स्थापित करने के लिए पृथक् अधिकारों का अधित्यजन करने का स्पष्ट आशय अवश्य ही स्थापित किया जाना चाहिए । संपत्ति में पृथक् अधिकारों का परित्याग करने का स्पष्ट आशय अवश्य ही साबित किया जाना चाहिए । कुटुम्ब के अन्य सदस्यों को संपत्ति का उपयोग करने या उदारतापूर्वक पृथक् संपत्ति की आय का उपयोग करने के लिए अनुज्ञात करने मात्र से परित्याग का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि इस संबंध में गंभीर विवाद था कि उधार का प्रतिदाय किसने किया था । वादी ने इस बात का दावा किया था कि केवल उसने उधार का प्रतिदाय किया था, तथापि, प्रतिवादी सुब्रमण्यन् ने यह दलील दी कि उधार का उन्मोचन सेनगोडा गौंडर को वादगत संपत्तियों से व्युत्पन्न आय में से ही उसके द्वारा किया गया था ।

किसी भी दशा में, जब दोनों निचले न्यायालयों ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का, जिसके अंतर्गत ऐसा दस्तावेज़ी साक्ष्य भी है जिसका उच्च न्यायालय द्वारा पुनर्मूल्यांकन किया गया था, मूल्यांकन करने पर यह निष्कर्ष निकाला हो कि वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में नहीं मिलाया गया था तब उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उन निष्कर्षों को उलटना, जो अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए थे, न्यायोचित नहीं है । (पैरा 9)

इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों के अनुसार, उच्च न्यायालय से सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील का विनिश्चय करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना और अपना निष्कर्ष निकालना अपेक्षित नहीं है और उच्च न्यायालय दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को तब अपास्त नहीं कर सकता जब दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए हों । प्रस्तुत मामले में, उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपीलों को विनिश्चित करते समय यही किया है, जो कि विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं है । यह उल्लेख करना आवश्यक है कि इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों के अनुसार और जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन उपबंधित है, द्वितीय अपील केवल विधि के सारवान् प्रश्न पर ही संधार्य होगी । विधि के तथ्य संबंधी प्रश्नों के आधार पर द्वितीय अपील नहीं की जा सकती है । सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए विधि के किसी सारवान् प्रश्न का विद्यमान होना अनिवार्य है । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश पारित करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का इस प्रकार पुनर्मूल्यांकन किया है मानो उच्च न्यायालय प्रथम अपील का विनिश्चय कर रहा था । उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय और अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करके आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा, वादगत संपत्तियों को अविभक्त

कौटुंबिक संपत्तियों में मिलाकर दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को अपास्त कर दिया है । यह पूर्णतः अननुज्ञेय है । जहां तक तथ्यों का संबंध है, प्रथम अपील न्यायालय अंतिम न्यायालय होता है और जब तक निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्ष प्रत्यक्षतः अनुचित और/या अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के प्रतिकूल नहीं पाए जाते हैं तब तक उच्च न्यायालय का निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्यों संबंधी उन निष्कर्षों को अपास्त करना न्यायोचित नहीं होगा जो अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित हों । उच्च न्यायालय के लिए अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना और अपना निष्कर्ष निकालना तब अनुज्ञेय नहीं है जब निचले न्यायालयों, विशेष रूप से प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित हों । अतः, उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपीलों का विनिश्चय करते समय अपनाई गई प्रक्रिया सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन उसकी शक्तियों का प्रयोग करने की व्याप्ति और परिधि से परे है । (पैरा 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2000]	(2000) 1 एस. सी. सी. 434 : **ईश्वर दास जैन** बनाम **सोहन लाल** ;	6,8
[1999]	(1999) 3 एस. सी. सी. 722 : **कोंडिबा दगादु कदम** बनाम **सावित्रीबाई सोपान गूजर** ;	6,8
[1997]	(1997) 4 एस. सी. सी. 713 : **पंचुगोपाल बरुआ** बनाम **उमेश चन्द्र गोस्वामी** ।	6

सिविल अपीली अधिकारिता : 2019 की सिविल अपील सं. 4536-4537.

2009 की द्वितीय अपील सं. 4 और 5 में मद्रास उच्च न्यायालय के तारीख 14 जून, 2013 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री सिद्धार्थ नायडू और वी. बालचन्द्रन

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री वी. प्रभाकर, सुश्री ज्योति पराशर, एन. जे. रामचन्दर और प्रमीत सक्सेना

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – दोनों विशेष इजाजत याचिकाओं में इजाजत दी जाती है ।

2. चूंकि इन दोनों अपीलों में विधि और तथ्य संबंधी एकसमान प्रश्न उद्भूत होता है और इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित एक ही आक्षेपित निर्णय और आदेश से उद्भूत हुआ है इसलिए इन दोनों अपीलों का विनिश्चय और निपटारा इस एक ही निर्णय और आदेश द्वारा एक-साथ किया जा रहा है ।

3. मूल प्रतिवादी ने, 2009 की द्वितीय अपील सं. 4 और 5 में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा पारित उस आक्षेपित सामान्य निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उक्त द्वितीय अपीलें मंजूर कर ली हैं और विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपील न्यायालय द्वारा वादों को खारिज करते हुए पारित किए गए निर्णय और डिक्री को अभिखंडित और अपास्त कर दिया है और परिणामस्वरूप इस मामले में प्रत्यर्थी-मूल वादी द्वारा फाइल किए गए वादों को डिक्री कर दिया था, प्रस्तुत अपीलें फाइल की हैं ।

4. प्रस्तुत अपीलों से संबंधित तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित रूप में हैं :–

यह कि मूल वादी (इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1) - एस. रामास्वामी ने वादपत्र की अनुसूची में वर्णित स्थावर संपत्तियों की बाबत प्रतिवादी सं. 2 (इस मामले में अपीलार्थी) को वादगत संपत्तियों में वादी के एक-तिहाई सामान्य अंश की बाबत वादी और मूल प्रतिवादी सं. 2 के बीच स्थायी व्यादेश की डिक्री द्वारा माप और सीमांकन करके अंतिम

विभाजन होने तक अन्यसंक्रामण या विल्लंगम करने या किसी किस्म की दस्तावेज़ का सृजन करने से अवरुद्ध करने के लिए आरंभ में 2006 का मूल वाद सं. 10 फाइल किया था । यह कि उक्त वाद मूल वादी द्वारा अपने पिता सेनगोडा गौंडर (मृत) तथा अपने छोटे भाई सुब्रमण्यन् के विरुद्ध फाइल किया गया था । यह कि उक्त वाद के लंबित रहने के दौरान इसी वादी-रामास्वामी ने अपने छोटे भाई सुब्रमण्यन् और अपने पिता सेनगोडा गौंडर के विरुद्ध वादगत संपत्तियों के विभाजन के लिए 2005 का मूल वाद सं. 19 फाइल किया । मूल वादी का यह पक्षकथन था कि वादी और उसका पिता तथा उसका छोटा भाई एक हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब गठित करते थे जिसके स्वामित्व में पैतृक संपत्तियां थीं । वादी की ओर से इसके अलावा यह पक्षकथन किया गया कि वादी के पिता, अर्थात् सेनगोडा गौंडर ने तारीख 7 अप्रैल, 1956 का प्रदर्श ए1-व्यवस्थापन विलेख कुमारस्वामी गौंडर नामक व्यक्ति द्वारा सेनगोडा गौंडर के पक्ष में निष्पादित कराया । वादी की ओर से यह कथन किया गया था कि उस समय से पैतृक संपत्तियों सहित वादगत संपत्तियों को भी अविभक्त कुटुम्ब की संपत्तियां माना गया था और सभी तीनों सहदायिक उनका मिलकर उपभोग कर रहे थे । यह अभिकथन किया गया था कि चूंकि वादी का पिता और उसका छोटा भाई, एक-दूसरे से दुरभिसंधि करके वादगत संपत्ति का अन्यसंक्रामण करने का प्रयत्न कर रहे थे इसलिए प्रथम व्यादेश वाद (2005 का मूल वाद सं. 19) फाइल किया गया था ।

4.1 इस वाद का मूल प्रतिवादी-वादी रामास्वामी के छोटे भाई द्वारा विरोध किया गया था । मूल प्रतिवादी की ओर से यह पक्षकथन किया गया था कि सेनगोडा गौंडर और उसके दो पुत्रों, अर्थात्, रामास्वामी और सुब्रमण्यन् के बीच कभी भी कोई अविभक्त कुटुम्ब विद्यमान नहीं था । यह कि वादगत संपत्तियां सेनगोडा गौंडर द्वारा वर्ष 1956 के दौरान प्रदर्श ए1-व्यवस्थापन विलेख के अनुसार उसकी स्वार्जित संपत्तियों के रूप में अभिप्राप्त की गई थीं । यह कि सेनगोडा गौंडर के पुत्रों, अर्थात् रामास्वामी और सुब्रमण्यन् का वादगत संपत्तियों से कोई संबंध नहीं था और उनका उसमें कोई सांपत्तिक अधिकार या अंश नहीं था और यह कि

उन्हें कभी भी अविभक्त कुटुम्ब संपत्तियां नहीं माना गया था । प्रतिवादी की ओर से विनिर्दिष्ट पक्षकथन यह किया गया था कि वास्तव में सेनगोडा गौंडर ने अपने जीवनकाल के दौरान सुब्रमण्यन् के पक्ष में दो व्यवस्थापन विलेख, प्रदर्श ए13 और ए14 निष्पादित किए थे और इसके पश्चात् उसने सुब्रमण्यन् के पक्ष में तारीख 8 नवम्बर, 2004 की वसीयत, प्रदर्श बी24 भी निष्पादित की । प्रतिवादी की ओर से यह पक्षकथन किया गया था कि इस प्रकार सुब्रमण्यन्-प्रतिवादी वादगत संपत्तियों का आत्यंतिक स्वामी बना । प्रतिवादी की ओर से यह भी दलील दी गई थी कि द्वितीय वाद सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 द्वारा वर्जित भी है । प्रतिवादी की ओर से यह कथन किया गया था कि वादी ने व्यादेश वाद (प्रथम वाद) फाइल किए जाने से पूर्व विभाजन की ईप्सा करते हुए सूचना जारी की और इसके बावजूद उसने आरंभ में केवल व्यादेश वाद फाइल किया और इसके पश्चात्, बिना किसी तुक या कारण के और व्यादेश वाद फाइल करते समय न्यायालय से बाद में विभाजन वाद फाइल करने की अनुज्ञा अभिप्राप्त किए बिना उसने केवल द्वितीय वाद फाइल कर दिया, जो कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 द्वारा वर्जित था ।

4.2 यह कि विचारण न्यायालय ने विवाद्यक विरचित किए । दोनों वादों का संयुक्त रूप से विचारण किया गया । वादी-रामास्वामी ने अभि. सा. 2 से अभि. सा. 4 के साथ-साथ अभि. सा. 1 के रूप में स्वयं की भी परीक्षा की और प्रदर्श ए1 से ए46 अभिलेख पर लाए गए थे । सुब्रमण्यन्-प्रतिवादी ने प्रति. सा. 2 से प्रति. सा. 4 के साथ-साथ प्रति. सा. 1 के रूप में स्वयं की भी परीक्षा की और प्रदर्श बी1 से बी31 अभिलेख पर लाए गए । यह कि इसके पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् दोनों वाद खारिज कर दिए । असफल वादी द्वारा फाइल की गई अपीलें विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गईं ।

4.3 प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित उस सामान्य निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, जिसके द्वारा अपीलें खारिज कर दी गई थीं और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा वादों को

खारिज करते हुए पारित निर्णय और डिक्री को पुष्ट कर दिया गया था, मूल वादी ने उच्च न्यायालय के समक्ष दो द्वितीय अपीलें फाइल कीं । उच्च न्यायालय ने विधि के निम्नलिखित प्रश्न, विधि के सारवान् प्रश्नों के रूप में बनाए और विरचित किए :-

> "(1) क्या दोनों निचले न्यायालयों का यह अभिनिर्धारित करना न्यायोचित था कि सेनगोडा गौंडर द्वारा दर्शाई गई उदारता को वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों के साथ मिलाने का कार्य नहीं समझा जाना चाहिए और क्या निचले न्यायालयों का प्रदर्श ए1 में पाई गई संपत्तियों को "पिधीराज्यम" (पैतृक संपत्ति) के रूप में वर्णित करने संबंधी तथ्य तथा प्रदर्श ए19, 24, 45 और 46 को अनदेखा करना और यह अभिनिर्धारित करते हुए कि मानो वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुंबिक संपत्तियों में नहीं मिलाया गया था या ऐसा नहीं माना गया था, मुकदमे का विनिश्चय करना न्यायोचित था ?
>
> (2) क्या निचले न्यायालयों द्वारा प्रदर्श ए13 और ए14-व्यवस्थापन विलेखों और प्रदर्श बी24-वसीयत को विधिमान्य ठहराना न्यायोचित था हालांकि, वादी के अनुसार उन दस्तावेज़ों को प्रतिपादित करने वाले व्यक्तियों द्वारा उन दस्तावेज़ों को विधि के अनुसार अभिकथित रूप से साबित नहीं किया गया था ?
>
> (3) क्या निचले न्यायालयों द्वारा लिखित कथन में उस संबंध में अभिवाक् किए जाने के बावजूद सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 के प्रति निर्देश किए बिना निर्णय देना न्यायोचित था ?
>
> (4) क्या दोनों निचले न्यायालयों के निर्णय में कोई प्रतिकूलता या अवैधता है ?"

यह कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा और अभिलेख पर विद्यमान संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के पश्चात् विधि के उपर्युक्त प्रश्नों/विधि के सारवान् प्रश्नों का उत्तर निम्नलिखित रूप में दिया :-

> "विधि के सारवान् प्रश्न सं. (1) को इस आशय से विनिश्चित

किया जाता है कि दोनों निचले न्यायालयों का यह अभिनिर्धारित करना न्यायोचित नहीं था कि सेनगोडा गौंडर द्वारा दर्शाई गई उदारता को वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों में मिलाने के कार्य के रूप में नहीं माना जाना चाहिए और निचले न्यायालयों का प्रदर्श ए1 में पाई गई संपत्तियों को "पिधीराज्यम" के रूप में वर्णित करने संबंधी तथ्य और यह अभिनिर्धारित करते हुए मुकदमे का विनिश्चय करने में प्रदर्श ए19, 24, 45 और 46 को भी अनदेखा करना न्यायोचित नहीं था मानो वादगत संपत्ति को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्ति में नहीं मिलाया गया था या उन्हें उस रूप में नहीं माना गया था ।

विधि के सारवान् प्रश्न सं. (2) का विनिश्चय इस आशय से किया जाता है कि निचले न्यायालयों का प्रदर्श ए13 और ए14-व्यवस्थापन विलेखों और प्रदर्श ए24-वसीयत के निष्पादन को कायम रखना न्यायोचित था तथापि, मेरे उपर्युक्त विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए सेनगोडा गौंडर संपूर्ण वादगत संपत्ति को स्वार्जित संपत्ति मानकर व्यवस्थापन विलेख निष्पादित करने के लिए सक्षम नहीं था किन्तु उसके केवल एक-तिहाई शेयर के बारे में यह समझा जा सकता था कि उसने शेष दो सहदायिकों, अर्थात् अपने पुत्रों के पक्ष में उसका परित्याग कर दिया था । इस कारण वादगत संपत्ति को दो अंशों में विभाजित किया जाएगा । वादी और प्रतिवादी प्रत्येक वादगत संपत्ति के आधे अंश का हकदार होगा ।

विधि के सारवान् प्रश्न सं. (3) का विनिश्चय इस आशय से किया जाता है कि निचले न्यायालयों का, मेरे उपर्युक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए कि विभाजन की ईप्सा करने संबंधी वाद हेतुक एक सतत् प्रक्रिया है, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 के प्रति निर्देश किए बिना निर्णय देना न्यायोचित था ।"

परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय ने दोनों अपीलें मंजूर कर लीं और विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपील न्यायालय के सामान्य निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया और विभाजन की प्रारंभिक डिक्री तैयार करने

का निदेश दिया है, जिसमें वादी और प्रतिवादी, प्रत्येक को आधा अंश आबंटित किया जाए ।

4.4 मूल प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय अभिलेख पर विद्यमान संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया है और दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को अपास्त कर दिया था, प्रस्तुत अपीलें फाइल की हैं ।

5. अपीलार्थी-मूल प्रतिवादी की ओर से विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू उपस्थित हुए और प्रत्यर्थी सं. 1-मूल वादी की ओर से विद्वान् अधिवक्ता श्री वी. प्रभाकर उपस्थित हुए ।

6. मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू ने बलपूर्वक यह दलील दी है कि मामले के तथ्यों और उसकी परिस्थितियों को देखते हुए, उच्च न्यायालय ने अपीलों को मंजूर करके और निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों में हस्तक्षेप करके प्रत्यक्षतः गंभीर त्रुटि कारित की है ।

6.1 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू ने बलपूर्वक यह दलील दी है कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश पारित करके सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए अपनी अधिकारिता से परे कार्य किया है ।

6.2 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू ने इसके अतिरिक्त यह दलील दी है कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अनेक विनिश्चयों में अभिनिर्धारित किया गया है और सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अनुसार भी, उच्च न्यायालय के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य का इस प्रकार पुनर्मूल्यांकन करना अपेक्षित नहीं है मानो उच्च

न्यायालय प्रथम अपील का विनिश्चय कर रहा है ।

6.3 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू द्वारा यह भी दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय द्वारा विरचित विधि के सारवान् प्रश्नों को विधि के सारवान् प्रश्न बिल्कुल भी नहीं कहा जा सकता है । यह निवेदन किया गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 में केवल विधि के सारवान् प्रश्नों पर ही द्वितीय अपील का उपबंध है । यह दलील दी गई है कि केवल विधि के प्रश्न के आधार पर ही द्वितीय अपील को ग्रहण करना आवश्यक नहीं है । यह निवेदन किया गया है कि विधि का प्रश्न विधि का सारवान् प्रश्न न कि मात्र विधि का प्रश्न होना चाहिए । यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपीलों का विनिश्चय करते समय बनाए गए और विरचित विधि के सारवान् प्रश्नों को बिल्कुल भी विधि के सारवान् प्रश्न नहीं कहा जा सकता है । यह दलील दी गई है कि प्रत्यक्षतः, उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए और विरचित विधि के सारवान् प्रश्न तथ्य संबंधी प्रश्न हैं । अतः, यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपीलों को मंजूर करके गंभीर त्रुटि कारित की है ।

6.4 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू द्वारा यह भी दलील दी गई है कि अन्यथा भी उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता है चूंकि उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया है, जो कि पूर्णतः अननुज्ञेय है । यह दलील दी गई है कि जहां तक तथ्य संबंधी प्रश्न का संबंध है, प्रथम अपील न्यायालय तथ्यों के संबंध में अंतिम न्यायालय है । यह दलील दी गई है कि जब तक अभिलिखित निष्कर्षों को अनुचित और/या अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के प्रतिकूल नहीं पाया जाता है तब तक उच्च न्यायालय का निचले न्यायालयों, विशेषकर प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अभिलिखित ऐसे निष्कर्षों को उलटना न्यायोचित नहीं था । यह दलील दी गई है कि प्रस्तुत मामले में, यदि हम उच्च

न्यायालय द्वारा पारित संपूर्ण निर्णय और आदेश का अवलोकन करें तो उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया है और अपना निर्णय और अपने निष्कर्ष निकाले हैं और इसके पश्चात् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी उन निष्कर्षों में हस्तक्षेप किया है जो कि साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित थे, जो कि पूर्णतः अननुज्ञेय है । अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल ने अपनी उपर्युक्त दलीलों के समर्थन में और सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील का विनिश्चय करते समय उच्च न्यायालय की अधिकारिता की परिधि और व्याप्ति के संबंध में **पंचुगोपाल बरुआ** बनाम **उमेश चन्द्र गोस्वामी**[1], **कोंडिबा दगादु कदम** बनाम **सावित्रीबाई सोपान गूजर**[2] और **ईश्वर दास जैन** बनाम **सोहन लाल**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों का जोरदार अवलंब लिया है ।

6.5 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू ने आगे यह दलील दी है कि अन्यथा भी उन आधारों को भी कायम नहीं रखा जा सकता है जिनके आधार पर उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों के साथ मिलाया गया था ।

6.6 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू ने आगे यह दलील दी कि स्वीकृततः और उच्च न्यायालय के अनुसार भी, वादगत संपत्तियां सेनगोडा गौंडर (पिता) की स्वार्जित संपत्तियां थीं क्योंकि वे संपत्तियां उसके द्वारा अपने सीधे पुरुष पूर्वजों से नहीं बल्कि अपनी माता की बहिन के पति से अभिप्राप्त की गई थीं । यह दलील दी गई है कि इसलिए, मात्र इस कारण कि सेनगोडा गौंडर और उसके दो पुत्र एक साथ निवास कर रहे थे और हो सकता है कि उन सभी ने उस भूमि के संबंध में कुछ उधार लिया हो तो

---

[1] (1997) 4 एस. सी. सी. 713.

[2] (1999) 3 एस. सी. सी. 722.

[3] (2000) 1 एस. सी. सी. 434.

भी यह नहीं कहा जा सकता है कि सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों के साथ मिलाया गया था । यह दलील दी गई है कि प्रतिवादी की ओर से विनिर्दिष्ट रूप से यह पक्षकथन किया गया था कि सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्ति में से ही उसके द्वारा व्युत्पन्न आय में से उधार का प्रतिदाय/उन्मोचन किया गया था ।

6.7 मूल प्रतिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ नायडू ने आगे यह दलील दी कि यह तथ्य कि पिता-सेनगोडा गौंडर ने अपने जीवनकाल के दौरान दो व्यवस्थापन विलेख, प्रदर्श ए13 और ए14 निष्पादित किए और उसके बाद उसने तारीख 8 नवम्बर, 2004 की वसीयत, प्रदर्श बी24 निष्पादित की जो कि इस तथ्य का द्योतक है कि पिता-सेनगोडा का वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाने का कोई आशय नहीं था । यह दलील दी गई कि इसलिए उच्च न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से यह मताभिव्यक्ति की और अभिनिर्धारित किया कि निचले न्यायालयों का प्रदर्श ए13 और ए14-व्यवस्थापन विलेख तथा प्रदर्श बी24-वसीयत के निष्पादन को कायम रखना न्यायोचित था । तथापि, यह दलील दी गई है कि इसके पश्चात् उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की है कि सेनगोडा गौंडर संपूर्ण वादगत संपत्ति को स्वार्जित संपत्ति मानकर व्यवस्थापन विलेख निष्पादित करने के लिए सक्षम नहीं था किन्तु उसके केवल एक-तिहाई शेयर के बारे में यह समझा जा सकता था कि उसने शेष दो सहदायिकों, अर्थात् अपने पुत्रों के पक्ष में उसका परित्याग कर दिया था ।

6.8 उपर्युक्त दलीलें देते हुए और इस न्यायालय के उपर्युक्त विनिश्चयों का अवलंब लेते हुए यह प्रार्थना की गई कि प्रस्तुत अपीलों को मंजूर कर लिया जाए और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश को अभिखंडित और अपास्त कर दिया जाए और परिणामस्वरूप निचले न्यायालयों द्वारा वादों को खारिज करते हुए पारित निर्णय और डिक्री को प्रत्यावर्तित कर दिया जाए ।

7. मूल वादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल श्री वी. प्रभाकर ने प्रस्तुत अपीलों का विरोध करते समय बलपूर्वक यह

दलील दी कि उच्च न्यायालय सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपीलों का विनिश्चय करते समय अपनी परिसीमाओं से सचेत था । तथापि, यह दलील दी गई थी कि चूंकि उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि दोनों निचले न्यायालयों ने अभिलेख पर मौजूद सुसंगत सामग्री और साक्ष्य का, विशेष रूप से प्रदर्श ए1 तथा प्रदर्श ए19, 24, 45 और 46 का उचित रूप से मूल्यांकन नहीं किया है, इसके पश्चात् उच्च न्यायालय ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों/पैतृक संपत्तियों के साथ नहीं मिलाया गया था ।

7.1 मूल वादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल श्री वी. प्रभाकर ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते समय अकाट्य कारण दिए गए हैं कि सेनगोडा गौंडर द्वारा दर्शाई गई उदारता को वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों/ अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाने के कारण के रूप में माना जाना चाहिए ।

7.2 मूल वादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल श्री वी. प्रभाकर द्वारा आगे यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय ने तारीख 5 फरवरी, 1975 के विक्रय विलेख-प्रदर्श ए10 और तारीख 25 मार्च, 1977 के विक्रय विलेख-प्रदर्श ए2 पर विचार करने के पश्चात्, जिनके द्वारा तारीख 7 अप्रैल, 1956 के व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए1 में विनिर्दिष्ट कुछ संपत्तियों को पैतृक संपत्तियां मानते हुए उनका विक्रय किया गया था, ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि उसके पश्चात् सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों में मिलाया गया था और प्रदर्श ए1 तारीख 7 अप्रैल, 1956 के व्यवस्थापन विलेख में विनिर्दिष्ट समस्त संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियां माना गया था । यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय ने इसके पश्चात् और इस प्रकार निष्कर्ष निकालने पर ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि जब एक बार सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों में मिला दिया गया था, तब इसके पश्चात् वे संपत्तियां उसके लिए खुली नहीं थीं और/या सेनगोडा गौंडर के पास वादगत संपत्तियों को

समग्र रूप से स्वार्जित संपत्तियां मानकर व्यवस्थापन विलेखों और/या वसीयत को निष्पादित करने की सक्षमता नहीं थी ।

7.3 अब, जहां तक अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल द्वारा किए गए इन निवेदनों का संबंध है कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश पारित करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया है, मूल वादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल श्री वी. प्रभाकर द्वारा यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय, विधि के सारवान् प्रश्नों पर विचार करते समय और/या उन्हें विनिश्चित करते समय अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार करने और/या उसका मूल्यांकन करने और इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए बाध्य है कि निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष अनुचित या अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के प्रतिकूल हैं । अतः, यह दलील दी गई है कि उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए द्वितीय अपीलों का विनिश्चय करते समय साक्ष्य का मूल्यांकन किया जाना अनुज्ञेय है ।

7.4 उपर्युक्त निवेदन करते हुए यह प्रार्थना की गई है कि प्रस्तुत अपीलों को खारिज कर दिया जाए ।

8. संबंधित पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेलों की विस्तारपूर्वक सुनवाई की गई ।

8.1 प्रारंभ में, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि इस प्रकार विद्वान् विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपील न्यायालय, दोनों ने वादों को विशेष रूप से मूल वादी द्वारा फाइल किए गए विभाजन संबंधी वाद को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि वादगत संपत्तियां सेनगोडा गौंडर की पैतृक संपत्तियां नहीं थीं बल्कि वे सेनगोडा गौंडर की स्वार्जित संपत्तियां थीं । दोनों निचले न्यायालयों ने, साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विनिर्दिष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकाला कि इस प्रकार सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को पैतृक संपत्तियों में नहीं मिलाया गया था । तथापि, दोनों निचले न्यायालयों द्वारा

अभिलिखित उक्त निष्कर्षों को उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए द्वितीय अपीलों का विनिश्चय करते समय उलट दिया गया और अपास्त कर दिया गया । हमने विद्वान् विचारण न्यायालय तथा प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों का परिशीलन किया है और उन पर विचार किया है । अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का, विशेष रूप से उस दस्तावेज़ी साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात्, जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा प्रदर्श ए1 और प्रदर्श ए19, 24, 45 और 46 के रूप में विचार किया गया था, दोनों निचले न्यायालयों ने यह निष्कर्ष निकाला कि वादगत संपत्ति को अविभक्त कुटुम्ब की संपत्ति के रूप में नहीं मिलाया गया था या उसे ऐसा नहीं माना गया था । उपर्युक्त के बावजूद, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित सामान्य निर्णय और आदेश पारित करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया है, जिसके अंतर्गत वह दस्तावेज़ी साक्ष्य भी है जिस पर दोनों निचले न्यायालयों द्वारा भी विचार किया गया था और उसने वादगत संपत्ति को अविभक्त कुटुम्ब की संपत्ति के रूप में मिलाने के संबंध में दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को उलट दिया है और अपने निष्कर्ष निकाले हैं, जो कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए पूर्णतः अननुज्ञेय है । इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों के अनुसार, उच्च न्यायालय से सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील का विनिश्चय करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना और अपना निष्कर्ष निकालना अपेक्षित नहीं है और उच्च न्यायालय दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को तब अपास्त नहीं कर सकता जब दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए हों । प्रस्तुत मामले में, उच्च न्यायालय ने द्वितीय अपीलों को विनिश्चित करते समय यही किया है, जो कि विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं है ।

8.2 अन्यथा भी, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि इस न्यायालय

के अनेक विनिश्चयों के अनुसार और जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन उपबंधित है, द्वितीय अपील केवल विधि के सारवान् प्रश्न पर ही संधार्य होगी । विधि के तथ्य संबंधी प्रश्नों के आधार पर द्वितीय अपील नहीं की जा सकती है । सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए विधि के किसी सारवान् प्रश्न का विद्यमान होना अनिवार्य है । जैसा कि **कोंडिबा दगादु कदम** (उपर्युक्त) वाले मामले में मताभिव्यक्ति की गई है और अभिनिर्धारित किया गया है, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन किसी द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय तब तक प्रथम अपील न्यायालय की राय पर अपनी राय प्रतिस्थापित नहीं कर सकता जब तक कि वह यह निष्कर्ष नहीं निकाल लेता कि निचले न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष इसलिए त्रुटिपूर्ण थे क्योंकि वे :–

(i) लागू विधि के आज्ञापक उपबंधों के प्रतिकूल थे ;

या

(ii) उच्चतम न्यायालय द्वारा यथा-उद्घोषित विधि के प्रतिकूल थे ;

या

(iii) अननुज्ञेय साक्ष्य या कोई-साक्ष्य-नहीं पर आधारित थे ।

इस न्यायालय द्वारा उपर्युक्त विनिश्चय में, इसके अलावा यह मत व्यक्त किया गया है कि यदि प्रथम अपील न्यायालय ने अपने विवेकाधिकार का प्रयोग न्यायिक रीति में किया है तो उसके विनिश्चय के बारे में यह अभिलिखित नहीं किया जा सकता है कि वह या तो विधि की दृष्टि से या द्वितीय अपील में हस्तक्षेप करने की अपेक्षा करने वाली प्रक्रिया संबंधी त्रुटि से ग्रस्त है । इसके अलावा, यह मत व्यक्त किया गया है कि यह कोई ऐसा विधि का प्रश्न नहीं है जिससे द्वितीय अपील में हस्तक्षेप करना न्यायोचित हो कि विचारण न्यायालय इससे भिन्न रूप में विनिश्चित कर सकता था ।

8.3 इस संबंध में **ईश्वर दास जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में कार्यवाही की गई है और विचार किया गया है कि कब यह कहा जा सकता है कि विधि का कोई सारवान् प्रश्न उद्भूत हुआ है । उपर्युक्त

विनिश्चय में, इस न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से इस प्रकार मत व्यक्त किया है और अभिनिर्धारित किया है :-

> "सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन, 1976 के संशोधन के पश्चात्, उच्च न्यायालय के लिए विधि का सारवान् प्रश्न बनाना आवश्यक है और ऐसा किए बिना प्रथम अपील न्यायालय के निर्णय को उलटना अनुज्ञेय नहीं है । ऐसी दो स्थितियां हैं, जिनमें तथ्य संबंधी निष्कर्षों में हस्तक्षेप अनुज्ञेय है । पहली स्थिति वह है जब ऐसे तात्विक या सुसंगत साक्ष्य पर विचार नहीं किया जाता है, जिस पर यदि विचार किया गया होता तो इसके विपरीत निष्कर्ष निकलता । दूसरी स्थिति, जिसमें तथ्य संबंधी निष्कर्षों में हस्तक्षेप करना अनुज्ञेय है, वह है जहां अपील न्यायालय द्वारा ऐसे अग्राह्य साक्ष्य का अवलंब लेकर निष्कर्ष निकाला गया है जिसका यदि लोप कर दिया गया होता तो विपरीत निष्कर्ष संभव था । उपर्युक्त किसी भी स्थिति में, विधि का सारवान् प्रश्न उद्भूत हो सकता है ।"

8.4 इस न्यायालय द्वारा उपर्युक्त विनिश्चयों में अधिकथित विधि को विधि के प्रश्नों पर लागू करते हुए, जिन्हें उच्च न्यायालय द्वारा बनाया/विरचित किया गया है और जिनका उत्तर दिया गया है, जो कि इसमें इसके ऊपर उद्धृत किए गए हैं, यह नहीं कहा जा सकता है कि उक्त विधि के प्रश्नों को विधि के सारवान् प्रश्न नहीं कहा जा सकता है । इन्हें केवल विधि के प्रश्न या तथ्य संबंधी प्रश्न कहा जा सकता है और विधि के सारवान् प्रश्न नहीं कहा जा सकता है ।

8.5 जैसा कि इसमें उसके ऊपर मत व्यक्त किया गया है, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश पारित करते समय अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का इस प्रकार पुनर्मूल्यांकन किया है मानो उच्च न्यायालय प्रथम अपील का विनिश्चय कर रहा था । उच्च न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते समय और अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करके आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा, वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुंबिक संपत्तियों में मिलाकर दोनों निचले

न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को अपास्त कर दिया है । यह पूर्णतः अननुज्ञेय है । जहां तक तथ्यों का संबंध है, प्रथम अपील न्यायालय अंतिम न्यायालय होता है और जब तक निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्ष प्रत्यक्षतः अनुचित और/या अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के प्रतिकूल नहीं पाए जाते हैं तब तक उच्च न्यायालय का निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्यों संबंधी उन निष्कर्षों को अपास्त करना न्यायोचित नहीं होगा जो अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित हों । उच्च न्यायालय के लिए अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना और अपना निष्कर्ष निकालना तब अनुज्ञेय नहीं है जब निचले न्यायालयों, विशेष रूप से प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष साक्ष्य के मूल्यांकन पर आधारित हों । अतः, उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपीलों का विनिश्चय करते समय अपनाई गई प्रक्रिया सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन उसकी शक्तियों का प्रयोग करने की व्याप्ति और परिधि से परे है ।

9. अन्यथा भी, उच्च न्यायालय ने गुणागुण के आधार पर यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की है कि सेनगोडा गौंडर द्वारा वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाया गया था । यह एक स्वीकृत स्थिति है कि, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है और अभिनिर्धारित किया गया है कि वादगत संपत्तियां तारीख 7 अप्रैल, 1956 के व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए1 के अनुसरण में सेनगोडा गौंडर की स्वार्जित संपत्तियां थीं क्योंकि सेनगोडा गौंडर द्वारा वे संपत्तियां अपने सीधे पुरुष पूर्वजों से अभिप्राप्त नहीं की गई थीं बल्कि अपनी माता की बहिन के पति से अभिप्राप्त की गई थीं । उच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि जब कुछ संपत्तियों का विक्रय किया गया था तब तारीख 7 अप्रैल, 1956 के व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए1 में विनिर्दिष्ट इनमें से कुछ संपत्तियों का विक्रय किया गया था और विवरण में यह उल्लेख किया गया था कि इन संपत्तियों का विक्रय कुटुम्ब के खर्चों और फार्म के व्ययों की अत्यावश्यक आवश्यकता को पूरा करने के लिए किया गया था और यह उल्लेख किया

गया था कि वे संपत्तियां उनके पूर्वजों के माध्यम से संयुक्त रूप से उनकी थीं । तथापि, दस्तावेज़ी साक्ष्य और विशेष रूप से व्यवस्थापन विलेख-प्रदर्श ए13, ए14 और स्वयं सेनगोडा गौंडर द्वारा निष्पादित वसीयत-प्रदर्श बी24, जिसके द्वारा वही संपत्तियां मूल प्रतिवादी-उसके पुत्र सुब्रमण्यन् को दी गई थीं, पर विचार करने पर पिता-सेनगोडा गौंडर का आशय अत्यंत स्पष्ट् था कि वादगत संपत्तियों को स्वार्जित संपत्तियां न कि अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियां माना गया था ।

9.1 उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए इन कारणों को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि चूंकि वादगत संपत्तियों के संबंध में बोरवैल के उधार, फसल उधार, इलैक्ट्रिक मोटर पम्प सैट उधार, आभूषण उधार अविभक्त कुटुम्ब के सभी तीन सदस्यों, अर्थात् सेनगोडा गौंडर, रामास्वामी और सुब्रमण्यन् द्वारा लिए गए थे इसलिए वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाया भी गया था । चूंकि ये सभी तीनों एक साथ निवास कर रहे थे और हो सकता है कि कुछ उधार एक साथ रहने वाले कौटुम्बिक सदस्यों द्वारा लिए गए हों, किन्तु इसके आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में मिलाया गया था । संपत्तियों को मिलाने के पहलू के संबंध में विधि सुस्थापित है कि किसी अविभक्त हिन्दू कुटुम्ब की पृथक् और स्वार्जित संपत्ति को तब अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों का स्वरूप प्रदान किया जा सकता है यदि वह संपत्ति उसके स्वामी द्वारा उस संपत्ति में अपने पृथक् दावे का परित्याग करने के आशय से स्वेच्छया सामान्य संपत्ति में मिला ली गई हो; किन्तु ऐसा परित्याग स्थापित करने के लिए पृथक् अधिकारों का अधित्यजन करने का स्पष्ट आशय अवश्य ही स्थापित किया जाना चाहिए । संपत्ति में पृथक् अधिकारों का परित्याग करने का स्पष्ट आशय अवश्य ही साबित किया जाना चाहिए । कुटुम्ब के अन्य सदस्यों को संपत्ति का उपयोग करने या उदारतापूर्वक पृथक् संपत्ति की आय का उपयोग करने के लिए अनुज्ञात करने मात्र से परित्याग का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि इस संबंध में गंभीर विवाद था कि उधार का प्रतिदाय किसने किया

था । वादी ने इस बात का दावा किया था कि केवल उसने उधार का प्रतिदाय किया था, तथापि, प्रतिवादी सुब्रमण्यन् ने यह दलील दी कि उधार का उन्मोचन सेनगोडा गौंडर को वादगत संपत्तियों से व्युत्पन्न आय में से ही उसके द्वारा किया गया था । किसी भी दशा में, जब दोनों निचले न्यायालयों ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का, जिसके अंतर्गत ऐसा दस्तावेज़ी साक्ष्य भी है जिसका उच्च न्यायालय द्वारा पुनर्मूल्यांकन किया गया था, मूल्यांकन करने पर यह निष्कर्ष निकाला हो कि वादगत संपत्तियों को अविभक्त कौटुम्बिक संपत्तियों में नहीं मिलाया गया था तब उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उन निष्कर्षों को उलटना, जो अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए थे, न्यायोचित नहीं है ।

10. उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए और ऊपर कथित कारणों के अनुसार, दोनों प्रस्तुत अपीलें मंजूर की जाती हैं । उच्च न्यायालय द्वारा 2009 की द्वितीय अपील सं. 4 और 5 में पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किया जाता है तथा विचारण न्यायालय द्वारा वादों को खारिज करते हुए पारित सामान्य निर्णय और डिक्री प्रत्यावर्तित की जाती है । तथापि, मामले के तथ्यों और उसकी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

ग्रो.